Vindhyan Bloom

ISSN-2319-8478
Vol-15 Issue-3, June 2026

A Referred Peer Review Research Journal

Vindhyan Bloom

ISSN-2319-8478 Vol-15 Issue-3, June 2026

Manuscript Information	Research Paper	Paper No. VBRP-36

प्राचीन भारतीय ग्रंथों में पारिस्थितिक बुद्धिमत्ता

***डॉ. नलिनी तिलकर**, सहायक प्राध्यापक एवं संस्कृत विभागाध्यक्ष PMCOE- शासकीय माधव महाविद्यालय उज्जैन*

सारांश-प्रस्तुत शोध पत्र भारतीय **ज्ञान** प्रणाली के आलोक में प्राचीन भारतीय ग्रंथों में अंतर्निहित पारिस्थितिक **बुद्धिमत्ता** का एक गहन और समालोचनात्मक **विश्लेषण** प्रस्तुत करता है। वर्तमान वैश्विक **पर्यावरणीय** संकट, जलवायु परिवर्तन और जैव विविधता के ह्रास के संदर्भ में, यह अध्ययन वैदिक, उपनिषदिक और उत्तर-वैदिक वास्तुकला एवं साहित्य में वर्णित प्रकृति-मानव अंतर्संबंधों की प्रासंगिकता की पड़ताल करता है। शोध **दर्शाता** है कि प्राचीन भारतीय वास्तुरचना और दर्शन में प्रकृति को एक उपभोग्य वस्तु के **रूप** में नहीं, बल्कि एक जीवंत, अंतर्संबंधित और पवित्र इकाई के रूप में स्वीकार किया गया है। ऋग्वेद का 'पृथ्वी सूक्त', यजुर्वेद के शांति पाठ और उपनिषदों के अद्वैत दर्शन का विश्लेषण यह प्रमाणित करता है कि **प्राचीन** ऋषियों ने सतत विकास और पारिस्थितिक संतुलन के सिद्धांतों को धार्मिक और सामाजिक कर्तव्यों से संबद्ध किया था। पंचमहाभूत पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश की अवधारणा न केवल ब्रह्मांडीय संरचना को स्पष्ट करती है, बल्कि पर्यावरण संरक्षण के लिए एक **व्यावहारिक** नियमावली भी प्रदान करती है। यह शोध पत्र यह निष्कर्ष निकालता है कि आधुनिक पश्चिमी मानव-केंद्रित दृष्टिकोण के विपरीत, भारतीय पारिस्थितिक दर्शन पर्यावरण-**केंद्रित** है। समकालीन विश्व के नीति **निर्माताओं** के लिए यह प्राचीन ज्ञान प्रणाली एक नवीन, धारणीय और समग्र पारिस्थितिक **प्रतिमान** प्रस्तुत करने में सक्षम है।

कीवर्ड : भारतीय ज्ञान प्रणाली , पारिस्थितिक बुद्धिमत्ता, पंचमहाभूत, सतत विकास, पर्यावरण-केंद्रित दृष्टिकोण।

प्रस्तावना- इक्कीसवीं सदी में संपूर्ण मानवता एक अभूतपूर्व पर्यावरणीय संकट से जूझ रही है। ग्लोबल वार्मिंग, वनों की कटाई, प्रदूषण और प्राकृतिक संसाधनों का **अनियंत्रित** दोहन आधुनिक औद्योगिक सभ्यता के वे परिणाम हैं, जिसने पृथ्वी के अस्तित्व पर ही प्रश्नचिह्न लगा दिया है। आधुनिक विज्ञान और पश्चिमी विकास मॉडल ने मुख्यतः एक 'मानव-केंद्रित' दृष्टिकोण को बढ़ावा दिया है, जहाँ प्रकृति को केवल मानव उपभोग की एक निर्जीव वस्तु माना गया है। इस वैश्विक संकट के निवारण हेतु वैश्विक मंचों पर एक वैचारिक परिवर्तन की मांग की जा रही है।

0इस संदर्भ में, 'भारतीय **ज्ञान** प्रणाली' एक अत्यंत सशक्त, समय-**परीक्षित** और समग्र विकल्प प्रस्तुत करती है। भारत के प्राचीन ग्रंथोंवेदों, उपनिषदों, पुराणों और स्मृतियोंमें पर्यावरण संरक्षण केवल एक वैज्ञानिक आवश्यकता नहीं, बल्कि **आध्यात्मिक** और नैतिक जीवन पद्धति का **अभिन्न** अंग रहा है। प्राचीन भारतीय मनीषियों ने समूचे ब्रह्मांड को एक परस्पर निर्भर तंत्र के **रूप** में देखा। इस शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य **प्राचीन** भारतीय ग्रंथों

ISSN-2319-8478
Vol-15 Issue-3, June 2026

में निहित पारिस्थितिक बुद्धिमत्ता का विश्लेषण करना और समकालीन **पर्यावरणीय** चुनौतियों के समाधान में इसकी **प्रासंगिकता** को रेखांकित करना है।

सैद्धांतिक रूपरेखा: पंचमहाभूत और ब्रह्मांडीय एकता -

भारतीय पारिस्थितिक दर्शन का आधार 'पंचमहाभूत' का सिद्धांत है। सांख्य दर्शन और उपनिषदों के अनुसार, दृश्यमान जगत और समस्त जीवधारी पांच मूल तत्वों के विभिन्न अनुपातों से निर्मित हैं:

पृथ्वी : जो स्थिरता, पोषण और जीवन को आधार प्रदान करती है।
जल : जो तरलता, जीवन-संचार और शुद्धि का प्रतीक है।
अग्नि : जो रूपांतरण, ऊष्मा और ऊर्जा का स्रोत है।
वायु : जो प्राणवायु के रूप में गति और श्वास का आधार है।
आकाश : जो सर्वव्यापी रिक्तता है, जिसमें अन्य चारों तत्व क्रियाशील होते हैं।

तैत्तिरीय उपनिषद (२.१) में स्पष्ट किया गया है:
"तस्माद्वा एतस्मादात्मन आकाशः संभूतः। आकाशाद्वायुः। वायोरग्निः। अग्नेरापः। अद्भ्यः पृथ्वी।"
अर्थात् आत्मा से आकाश, आकाश से वायु, वायु से अग्नि, अग्नि से जल और जल से पृथ्वी की उत्पत्ति हुई। यह अंतर्संबंध यह दर्शाता है कि मानव शरीर और बाह्य **पर्यावरण** में कोई तात्विक भेद नहीं है। प्रकृति को **क्षति** पहुँचाना स्वयं को क्षति पहुँचाने के **समतुल्य** है। यह दर्शन आधुनिक 'गहन **पारिस्थितिकी**' के सिद्धांतों के पूर्णतः अनुरूप है।

वैदिक साहित्य में पारिस्थितिक चेतना-

वैदिक ऋचाएँ प्रकृति के प्रति **कृतज्ञता**, विस्मय और सम्मान के भाव से ओतप्रोत हैं। वैदिक काल में प्रकृति के विभिन्न रूपों को 'देवत्व' प्रदान किया गया, जो वास्तव में उनके संरक्षण को सुनिश्चित करने की एक सामाजिक-सांस्कृतिक युक्ति थी।

ऋग्वेद का पृथ्वी सूक्त और भूमि के प्रति दृष्टिकोण-

अथर्ववेद का 'पृथ्वी सूक्त' **पर्यावरण** चेतना का विश्व-साहित्य में सबसे पहला और सबसे उत्कृष्ट घोषणापत्र है। इसमें ६३ मंत्र **हैं** जो मातृभूमि और पर्यावरण के प्रति अगाध श्रद्धा व्यक्त करते हैं। सूक्त का प्रसिद्ध उद्घोष है:
"माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः।" (अथर्ववेद, १२.१.१२, में उद्धृत)

अर्थात, पृथ्वी मेरी माता है और **मैं** इस भूमि का पुत्र हूँ।
यह सूक्त मनुष्य को स्वामी के बजाय एक विनम्र संतान के रूप में स्थापित करता है। इसी सूक्त में ऋषि प्रार्थना करते हैं:
"यत्ते भूमे विखनामि क्षिप्रं तदपि रोहतु।
मा ते मर्म विमृग्वरि मा ते हृदयं अर्पिपम्॥" (अथर्ववेद, १२.१.३५, में उद्धृत)

अर्थात, हे पृथ्वी माता ! विकास या जीवन-यापन के लिए मैं तुझसे जो कुछ भी खोदकर निकालूं, वह पुनः शीघ्र ही भर जाए। मैं तेरे मर्मस्थल या तेरे हृदय को कभी आघात न **पहुँचाऊँ**।
यह मंत्र सीधे तौर पर 'सतत दोहन' की व्याख्या करता है, न कि 'विनाशकारी शोषण' की, जो आज के **कॉर्पोरेट** पूंजीवाद की मुख्य विशेषता बन चुकी है।

यजुर्वेद और वैश्विक शांति का सिद्धांत-

वैदिक ऋषियों की चिंता केवल स्थानीय पर्यावरण तक सीमित नहीं थी, बल्कि वे ब्रह्मांडीय संतुलन के आकांक्षी थे। यजुर्वेद का 'शांति पाठ' इसका अनुपम उदाहरण है।
"ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरौषधयः शान्तिः।
वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वं शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि॥" (यजुर्वेद, ३६.१७, में उद्धृत)

ISSN-2319-8478
Vol-15 Issue-3, June 2026

इस प्रार्थना में अंतरिक्ष, **पृथ्वी**, जल, औषधियों, और वनस्पतियों की शांति (संतुलन) की कामना की गई है। यहाँ 'शांति' का तात्पर्य प्रकृति के तत्वों में परस्पर **सामंजस्य** से है। यदि वायु या जल प्रदूषित होते हैं, तो वे 'अशांत' हो जाते हैं, जिसका सीधा प्रभाव मानव स्वास्थ्य पर पड़ता है।

उत्तर-वैदिक ग्रंथ, उपनिषद और महाकाव्य-

उपनिषदों के अद्वैत दर्शन ने प्रकृति और पुरुष के बीच की द्वैतता को **समाप्त** कर दिया। ईशावास्योपनिषद का प्रथम **श्लोक** ही पारिस्थितिक अर्थशास्त्र की नींव रखता है:

"ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्॥" (ईशावास्योपनिषद, १, में उद्धृत)

अर्थात, इस चराचर जगत में जो कुछ भी है, वह सब ईश्वर द्वारा व्याप्त है। अतः इसका उपभोग त्यागपूर्ण भाव से करो, किसी अन्य के धन या संसाधनों का लोभ मत करो। यह श्लोक 'स्वैच्छिक सादगी' का संदेश देता है। यह आधुनिक उपभोक्तावादी **संस्कृति** पर कड़ा प्रहार है, जो वर्तमान जल संकट और कार्बन उत्सर्जन का मुख्य कारण है।

रामायण और महाभारत में वानिकी एवं जैव विविधता-

रामायण में 'दंडकारण्य' और 'किष्किंधा' के वनों का विस्तृत **वर्णन** है, जहाँ वनों को जीवनदायी और पवित्र माना गया है। महाभारत के 'अनुशासन पर्व' में भी वृक्षारोपण की अत्यधिक महिमा गाई गई है । महाभारत में स्पष्ट किया गया है कि जो **व्यक्ति** छायादार और फलदार वृक्ष लगाता है, वह अपने पितरों को कष्टों से तार देता है और उसके सामाजिक व प्राकृतिक ऋण समाप्त हो जाते **हैं**।

कौटिल्य का अर्थशास्त्र: पर्यावरण कानून और प्रबंधन-

प्राचीन भारत में **पर्यावरण** चेतना केवल दर्शन और धार्मिक ग्रंथों तक सीमित नहीं थी, बल्कि इसे राज्य की शासन **व्यवस्था** और विधि का हिस्सा भी बनाया गया था। ईसा पूर्व चौथी शताब्दी में रचित कौटिल्य का 'अर्थशास्त्र' इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है । **कौटिल्य** ने राज्य के आर्थिक विकास और पर्यावरण **संरक्षण** के बीच संतुलन स्थापित करने के लिए कड़े नियम बनाए थे।

अभयारण्य : अर्थशास्त्र में 'प्रदोषवन' और 'मृगवन' जैसे सुरक्षित क्षेत्रों का **उल्लेख** है, जहाँ पशुओं का शिकार करना और **वृक्षों** को काटना पूर्णतः प्रतिबंधित था ।

दंड विधान: यदि कोई व्यक्ति किसी फलदार या छायादार वृक्ष की टहनी काटता था, तो उस पर मौद्रिक जुर्माना लगाया जाता था।वृक्ष को समूल नष्ट करने पर कठोरतम शारीरिक दंड का प्रावधान था ।

जल प्रबंधन: मौर्य काल में राजकीय कुओं, तालाबों और नहरों को दूषित करने वाले या सार्वजनिक जलाशयों को **क्षति** पहुँचाने वाले व्यक्तियों के लिए भारी जुर्माने तय किए गए थे ।

प्राचीन भारतीय परंपराओं में जीव-जंतु और वनस्पति संरक्षण-

भारतीय संस्कृति में **'वसुधैव कुटुंबकम्'** (संपूर्ण पृथ्वी ही मेरा परिवार है) की भावना केवल मनुष्यों तक सीमित नहीं है, इसमें पशु-पक्षी और कीड़े-मकोड़े भी सम्मिलित हैं।

देववृक्ष और पादप पूज्यता-

तुलसी, बरगद (वट), पीपल, नीम और बेल जैसे वृक्षों को **देवत्व** प्रदान किया गया। आधुनिक विज्ञान **प्रमाणित** करता है कि

ISSN-2319-8478
Vol-15 Issue-3, June 2026

पीपल सर्वाधिक समय तक ऑक्सीजन उत्सर्जित करता है, और बरगद विशाल जैव विविधता को आश्रय देता है। **प्राचीन** ऋषियों को इन वृक्षों के पारिस्थितिक **मूल्यों** का भली-भांति ज्ञान था, इसलिए उन्होंने **इन्हें** धार्मिक महत्ता दी ताकि जनसामान्य **स्वतः** इनका संरक्षण करे।

वन्यजीव संरक्षण और देव-वाहन अवधारणा-

भारतीय देवशास्त्र में लगभग प्रत्येक देवी-देवता का संबंध किसी न किसी पशु या पक्षी से है जैसे- शिव का वृषभ, दुर्गा का सिंह, विष्णु का गरुड़, कार्तिकेय का मयूर, और लक्ष्मी का उल्लू। यह **प्रतीकात्मकता** समाज को यह सिखाती है कि **पारिस्थितिक** तंत्र के शीर्ष शिकारियों से लेकर छोटे जीवों तक, सभी का अस्तित्व इस सृष्टि के संचालन के लिए अनिवार्य है ।

समकालीन वैश्विक संदर्भ में भारतीय ज्ञान प्रणाली की प्रासंगिकता -

समकालीन पर्यावरणीय समस्या	**आधुनिक पश्चिमी दृष्टिकोण**	**भारतीय ज्ञान प्रणाली (IKS) का समाधान**
जलवायु परिवर्तन	तकनीकी सुधार और कार्बन ट्रेडिंग (व्यावसायिक)	प्रकृति के साथ **तादात्म्य** और जीवनशैली में बदलाव (मिशन लाइफ)
संसाधनों का अत्यधिक दोहन	असीमित उपभोग और आर्थिक विकास	**'तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा'** (त्यागपूर्ण उपभोग एवं **न्यूनतमवाद**)
प्रदूषण (जल, वायु, मृदा)	उपचारात्मक तकनीकें	तत्वों को 'पवित्र' और 'पूजनीय' मानकर मूल स्तर पर **संरक्षण**
जैव विविधता का ह्रास	मानव-केंद्रित उपयोगितावाद	जीव-मात्र के प्रति दया (**'वसुधैव कुटुंबकम्'**)

भारत सरकार द्वारा **वैश्विक** मंच पर प्रस्तावित **"मिशन लाइफ "** वास्तव में इसी प्राचीन भारतीय ज्ञान परंपरा का एक आधुनिक वैश्विक विस्तार है, जो उपभोग की प्रवृत्ति को बदलकर सजग उपयोग पर बल देता है ।

निष्कर्ष -

प्राचीन भारतीय ग्रंथों का गहन **विश्लेषण** यह स्पष्ट करता है कि भारत की **प्राचीन** सभ्यता वैज्ञानिक दृष्टिकोण और **आध्यात्मिक** चेतना के अनूठे समन्वय पर आधारित थी। प्राचीन ऋषियों ने यह समझ लिया था कि मानव का अस्तित्व प्रकृति के विनाश पर नहीं, बल्कि उसके साथ सह-अस्तित्व पर टिका हुआ है। वेदों का 'भूमि सूक्त', उपनिषदों का अद्वैत दर्शन, और कौटिल्य के कानूनी नियम सामूहिक रूप से एक सुदृढ़ **'पारिस्थितिक** नीतिशास्त्र' का निर्माण करते हैं।

वर्तमान वैश्विक समुदाय, जो कॉप सम्मेलनों और विभिन्न संधियों के माध्यम से जलवायु परिवर्तन का समाधान ढूंढने का प्रयास कर रहा है, उसे यह स्वीकार करना होगा कि केवल तकनीकी नवाचार या आर्थिक रणनीतियाँ तब तक पर्याप्त नहीं होंगी, जब तक कि मनुष्य का प्रकृति के **प्रति** आंतरिक दृष्टिकोण नहीं बदलता। भारतीय ज्ञान प्रणाली इसी वैचारिक परिवर्तन का **मार्ग** प्रशस्त करती है। समय की मांग है कि इस प्राचीन पारिस्थितिक बुद्धिमत्ता को आधुनिक शिक्षा प्रणाली, पर्यावरण नीतियों और सतत विकास के मॉडलों में एकीकृत किया जाए, ताकि आने वाली पीढ़ियों के लिए एक सुरक्षित और संतुलित पृथ्वी सुनिश्चित की जा सके।

संदर्भ सूची

- आचार्य, बालकृष्ण. (२०१६). *वैदिक संस्कृति और पर्यावरण संरक्षण.* दिव्य **प्रकाशन**।

ISSN-2319-8478
Vol-15 Issue-3, June 2026

- कौटिल्य. (१९१५). **अर्थशास्त्र** (आर. शमाशास्त्री, अनुवादक). गवर्नमेंट प्रेस। (मूल कार्य ईसा पूर्व चौथी शताब्दी में रचित).
- दवे, के. एन. (२००५). प्राचीन भारत में पक्षी और वन्यजीव संरक्षण. मोतीलाल बनारसीदास।
- शर्मा, रामशरण. (२००१). **प्राचीन** भारत में पारिस्थितिकी और भौतिक संस्कृति. राजकमल प्रकाशन।
- Dave, K. N. (2005). *Birds and wildlife conservation in ancient India*. Motilal Banarsidass.
- Dwivedi, O. P. (2000). *Climate change and environmental ethics: An Indian perspective*. Oxford University Press.
- Kautilya. (1915). *Arthashastra* (R. Shamasastry, Trans.). Government Press. (Original work published c. 4th century BCE).
- Radhakrishnan, S. (1953). *The principal Upanisads*. George Allen & Unwin.
- Sharma, R. S. (2001). *Ecology and material culture in ancient India*. Rajkamal Prakashan.